पंत काव्य में मानवतावादी दृष्टि

डॉ. रवींद्रनाथ मिश्र

आधुनिक हिंदी साहित्य में पंत प्रकृति एवं महादेवी वर्मा और वेदना एक दूसरे के पर्याय बन गए हैं। इससे अलग हटकर इन दोनों पर कुछ कहना जैसे असंगत-सा प्रतीत होता है। दरअसल ऐसी बात नहीं है क्योंकि श्रेष्ठ रचनाकार किसी एक विचारधारा से प्रतिबद्ध नहीं होता। वह तो विभिन्न कालों में जीवन-जगत की धड़कन को अपनी रचना में प्रस्तुत करता है। मनुष्य तो प्रकृति की अनुपम देन है प्रकृति से प्रेम करे और मनुष्य को छोड़ दे, भला यह कैसे हो सकता है, और वह भी पंत जैसे महान् व्यक्तित्व के लिए ! जिसकी सरल आँखें, घने बाल, सरल मन और उतने ही सरल विचार तथा उसके पीछे छिपी बाल सुलभ पवित्रता। लगता है कि प्रकृति की सहजता, स्वाभाविकता, सरलता और पवित्रता उनके तन-मन में बस गई थी। प्रकृति तो हमें पल-पल आदर्श एवं मानवता का संदेश देती रहती है। प्रकृति में रमने वाले कवि पंत मानवीय भावनाओं की उपेक्षा कैसे कर सकते हैं। बचपन का परिवेश किसी भी रचनाकार के लिए खाद एवं जीवन बीमा की धनराशि का कार्य करता है। शांति जोशी का कथन है—"पंतजी की भगवान पर अटल आस्था है। उनका बचपन से ही भगवत्-प्रेमियों, साधु-संतों से लगाव रहा है। बचपन में वह या तो प्रकृति के उन्मुक्त क्रोड़ में खेले हैं या दार्शनिकों तथा सत्य के अन्वेषियों की ओर आकर्षित हुए हैं प्रकृति की विस्मय-विमुग्ध शोभा निहारते तथा संतों की वाणी का रसपान करते हुए उन्होंने किशोरावस्था पार की।"

मातृविहीन गोसाईंदत्त प्रारंभिक शिक्षा कौसानी में प्राप्त कर अल्मोड़ा आ गए और वहीं पर अपना नाम सुमित्रानंदन पंत रखा। साधु-संतों से इतने प्रभावित थे कि कई मीलों तक पैदल चलकर उनसे मिलने चले जाते थे। बच्चन जी ने पंत पर एक संस्मरण में

लिखा है कि "उनसे अधिक संस्कृत और परिष्कृत रुचि के व्यक्ति को मैंने आज तक नहीं जाना। मेरी पत्नी कहती हैं, जब वे घर में रहते हैं, एक अजीब-सी स्निग्धता घर में छाई रहती है।"

समय के साथ-साथ पंत की प्रतिभा में निखार आता गया और वे हिंदी साहित्याकाश में स्निग्ध ज्योत्सना की किरणें बिखेरने लगे। पंत ने हमेशा नई भावभूमियों को तलाश कर काव्य सर्जन का कार्य किया। उनकी समस्त काव्यचेतना में विभिन्न आयामों की विकासोन्मुखी संस्कृतियों के तत्व मौजूद हैं। पंत का काव्य-व्यक्तित्व सर्वाधिक परिवर्तनशील रहा है। काव्य लेखन के प्रथम चरण में प्रकृति-प्रेम में आकंठ निमग्न होकर प्रेम और सौंदर्य में तन्मय होकर वे अत्यंत संवेदनशीलता का परिचय देते हैं। द्वितीय चरण में उनकी स्वच्छंदतावादी रोमानी दृष्टि प्रकट हुई है। तृतीय चरण में कवि कल्पनालोक को छोड़कर यथार्थवादी धरातल पर गाँधी और मार्क्सवाद के विचारों से जुड़ा। चतुर्थ चरण में आत्मदर्शन से जुड़ते हुए आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक फलक पर इनका चिंतन दर्शन बहुत व्यापक एवं प्रौढ़ रूप में व्यक्त हुआ है यहीं पर अरविंद दर्शन का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

पंत की मानवतावादी विचारधारा मुख्यत: 'युगांत', 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' नामक रचनाओं में मुखर हुई है। वैसे तो पंत के मानवतावादी स्वर की अनुगूंज 'गुंजन' में सुनाई देने लगती है। इन कृतियों का सर्जन 1930 से 1941 के बीच कालाकाँकर के 'नक्षत्र' बंगले पर किया गया। जहाँ रहकर पंत ने किसान एवं मजदूर की अभावभरी जिंदगी को करीब से देखा। एक तरफ द्रुमों की छाया और दूसरी तरफ मानवीय पीड़ा में पंत ने युगीन प्रभावों के तहत पीड़ा को तो स्वीकार किया लेकिन तन-मन में बसी प्रकृति से तुरंत मुक्त नहीं हो सके। 'गुंजन' की रचनाओं में प्रकृति के माध्यम से ही उन्होंने मानव को संबोधित किया।

हँसमुख प्रसून सिखलाते, पल-भर ही जो हँस पाओ,
अपने उर के सौरभ से, जग का आंगन भर जाओ।

(गुंजन पृ. 31)

प्रकृति सदैव से मानव की उपदेशिका रही है। भौतिक संस्कृति के आगमन के पूर्व मनुष्य प्रकृति की भांति सहज, सरल एवं हँसमुख था। आज जैसी कटुता नहीं थी कतिपय विशेष संदर्भों को छोड़कर आपस में लोग मिल-जुलकर रहते थे प्रकृति की स्वाभाविकता, स्निग्धता और सरलता स्वयं पंत के आचार-विचारों में देखी जा सकती है लेकिन आज की स्थिति तो एकदम भिन्न है। छल-प्रपंच एवं आडंबर पूर्ण माहौल में लूट-खसौट मची है। दोहरे मुखौटे वाले चरित्रों की भरमार हो गई है। मानवता जगह-जगह खंडित हो रही हैं ऐसे

परिवेश में पंत की उक्त पंक्तियाँ निश्चित रूप से मानवीय मूल्यों का प्रतिष्ठापन करती हैं। इसी तथ्य की पुष्टि करते हुए प्रसाद ने भी कहा–

औरों को हँसते देखो मनु हँसो और सुख पाओ।

पंत जीवन के एकांगी स्वरूप को ग्रहण न करके उसे एक ऐसे समग्र रूप में प्रस्तुत करना चाहते हैं। जिसमें सुख-दुःख का सम्यक संतुलन बना रहे। क्योंकि जीवन का एकांकी बोध दुख या सुख अपने आप में अपूर्ण और अतृप्तिकारक होता है एकांगी प्रवृत्ति ही शोषण और अबाधित भोग को जन्म देती है दुःख की अनंतता भी व्यक्ति को हताश और कुंठित करती है। इसीलिए वे कहते हैं–

जग पीड़ित है अति दुःख से, जग पीड़ित रे अति सुख से।
मानव जीवन मे बंट जाए, दुःख-सुख से औ सुख-दुख से।

(गुंजन पृ. 16)

वेदना जीवन को सुसंस्कृत, परिष्कृत तथा चमत्कृत करने का एक दिव्य उपादान है। जिसके कारण हमारी वृत्तियाँ कोमल हो जाती हैं।

तप रे मधुर-मधुर मन ! विश्व वेदना में तप-प्रतिपल,
जग-जीवन की ज्वाला में गल, बन अकलुष, उज्ज्वल औ 'कोमल
तप रे मधुर-मधुर मन !

(गुंजन पृ. 11)

एक मानवीय आशावाद 'गुंजन' की विशेषता है। जिसे रोमानी अवसाद से अलग रखकर देखा-परखा जा सकता है। पंत की मानवतावादी दृष्टि का खुलासा 'युगांत' में हुआ है। जहाँ जाकर वे गीता से निम्न पंक्तियों की भाँति नया स्वर प्रदान करते हैं–

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-न्यन्यानि संयाति नवानि देही।।

जगत की इस अनित्यता और निरंतन गतिशीलता को रेखांकित करते हुए गीता के उपर्युक्त सिद्धांत को पंत जी इस प्रकार प्रकट करते हैं–

द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र, हे स्त्रस्त ध्वस्त हे शुष्क शीर्ण,
हिम-ताप-पीत, मधुवात-भीत, तुम वीतराग, जड़ पुराचीन।

डॉ. प्रेमशंकर का मत है कि "पंत की मानवतावादी दृष्टि में नैतिक आदर्शवादी आग्रह है। इसलिए उनसे संपूर्ण क्रांति की अपेक्षा करना संभव नहीं, पर उनमें यह एहसास बराबर घर करता गया है कि दुनिया बदलनी चाहिए।"

'युगांत' में कवि गाँधीवाद एवं 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' में मार्क्सवाद से प्रभावित है। गाँधी ने हमें व्यापक सांस्कृतिक चेतना एवं अखंड मानवता का संदेश दिया तो मार्क्स

ने सामाजिक चेतना को झकझोर कर रख दिया। दोनों की दृष्टि मानवतावाद की ही रही। पंत को अपने आदर्शों का मूर्तिकरण और मानवता का पूर्ण विकास गाँधीजी के विचारों में दिखा।

तुम मांसहीन, तुम रक्तहीन, हे अस्थिशेष ! तुम अस्थिहीन
तुम शुद्ध बुद्ध आत्मा केवल, हे चिर पुराण, हे चिर नवीन।

(युगांत पृ. 61)

डॉ. संतोष तिवारी का मानना है कि "मानव की महत्ता का उद्घोष प्रगतिशील काव्य का एक प्रमुख तत्व है। यही मानववादी चेतना है। जिसका पर्यवसान विश्वबंधुत्व में होता है। यह विश्वबंधुत्व मानव के परस्पर आकर्षण का परिणाम है। जिसमें मानवमात्र के प्रति सम्मान प्रेम और सौंदर्य का भाव निहित रहता है। प्रकृति की माया में पूर्णतया आबद्ध पंत जी इस मानवीय सौंदर्य और आकर्षण का गहनता से अनुभव करते हैं। यहीं उनकी रुचि का पुर्नसंस्कार होता है और मानव उन्हें समस्त प्राकृतिक उपादानों की अपेक्षा सुंदरतर दिखाई पड़ने लगता है। यह परिवर्तन मानवीय निष्ठा की उद्ग्रता का परिणाम है। वे घोषित करते हैं–

सुंदर हैं विहग, सुमन सुंदर, मानव तुम ! सबसे सुंदरतम,
निर्मित सबकी तिल सुषमा से, तुम निखिल सृष्टि में चिर निरुपम !

(युगांत पृ. 55)

समसामयिक परिस्थितियों की विषमता एवं परतंत्रता से दुखी एवं त्रस्त मनुष्य के कल्याण के लिए कवि प्रभु से प्रार्थना करता है–

पाकर, प्रभु ! तुमसे अमर दान, करने मानव का परित्राण,
ला सकूँ विश्व में एक बार, फिर से नव जीवन का विहान !

(युगांत पृ. 33)

कवि जहाँ एक तरफ गाँधी एवं आध्यात्मिक विचारधारा से प्रभावित हो मानव कल्याण के लिए प्रभु की आराधना करता है, वहीं दूसरी तरफ मार्क्सवादी चिंतन के तहत शोषितों को वर्ग संघर्ष के लिए प्रेरित करता है 'बढ़ो अभय, विश्वास चरण धर ! गर्जन कर मानव केशरि, जग जीवन में जो चिर महान, जो दीन हीन, पीड़ित, निर्बल, मैं हूँ उनका जीवन संबल' आदि पंक्तियों के माध्यम से पंत अपनी मानवीय करुणा को व्यक्त करते हैं।

'युगवाणी' में पंत का युगीन नवीन स्वर और प्रखर हुआ है। जिसमें मानवहित की भावना सर्वोपरि है। 'दो लड़के' कविता में कवि ने जिस सामाजिक विषमता का चित्रण किया है, उसे हम 21वीं सदी के प्रारंभ में भी देख रहे हैं।

जल्दी से, टीले के नीचे उधर उतरकर, वे चुन ले जाते कूड़े से निधियाँ सुंदर।
सिगरेट के खाली डिब्बे, पन्नी चमकीली, फीतों के टुकड़े, तस्वीरें नीली-पीली।
(युगवाणी पृ. 33)

डॉ. रामजी तिवारी का विचार है कि "पंत की गहन अनुभूति का प्रमाण है कि आज भी हम उसमें अपने युग का साक्षात्कार करते हैं जिन स्थितियों का चित्रण उन्होंने गहन संवेदना के स्तर पर किया था, वे आज दूसरे कवियों के लिए प्रेरणा भूमि बन गई है। पंत की रचना के वर्षों बाद चंद्रकांत देवताले प्रायः उन्हीं की भाव भूमि को वाणी देते हुए कहते हैं–

थोड़े से बच्चों के लिए
एक बगीचा है, उनके पाँव दूब पर दौड़ रहे हैं।
असंख्य बच्चों के लिए
कीचड़-धूल और गंदगी से पटी
गलियां हैं जिनमें वे
अपना भविष्य बीन रहे हैं।

पंत साम्यवादी दृष्टि से वर्गहीन, शोषण विहीन नए समाज की रचना करना चाहते हैं, जिसमें 'सर्वे भवंतु सुखिनः' की कामना हो तथा भावी मानवता और नव संस्कृति की रूपरेखा निर्देशित हो–

क्यों न एक हो मानव-मानव सभी परस्पर,
मानवता निर्माण करें, जग में लोकोत्तर ?
जीवन का प्रासाद उठे भू पर गौरवमय,
मानव का साम्राज्य बने, मानवहित निश्चय।

दूधनाथ सिंह 'तारापथ' की भूमिका में लिखते हैं कि 'युगवाणी', 'ग्राम्या' की अधिकांश कविताओं में ग्राम जीवन का विरूप सौंदर्य प्रस्फुटित हुआ है उसका नग्न, कंपा देने वाला यथार्थ उसके अंदर का असहाय दैन्य जीवन और उस विरूपता के अंदर फूटते हुए अकृत्रिम सौंदर्य, निश्छलता और पवित्रता इन सभी का चित्रण इन कविताओं में हुआ है।"

'युगवाणी' की रचनाओं में पंत की संपूर्ण मानवीय चेतना साकार हो उठी है प्रकृति-प्रेमी कवि के अंतर्मन में गाँव की पीड़ा 'ग्राम्या' के माध्यम से व्यक्त हुई है। जिसमें मार्क्स, गाँधी और निराला की ग्रामीण लोकोन्मुखी भावना को दर्शाया गया है आगे चलकर नागार्जुन एवं त्रिलोचन ने इसे अपने काव्य का प्रमुख विषय बनाया 'कृषक' एवं 'श्रमजीवी' कविता में कृषकों के उद्धार की मंगलकामना की गई है–

युग-युग से नि:संग स्वीय श्रमबल से जीवित,
विश्व प्रगति अनभिज्ञ, कूप-तम में निज सीमित।
कृषक का उद्धार पुण्य इच्छा है कल्पित
सामूहिक कृषि काय कल्प, अन्यथा कृषक मृत।

पंत जैसे प्रकृति के सुकुमार कवि युगीन प्रभावों से प्रभावित होकर शोषित जन के पक्ष में लोकक्रांति को समतामूलक समाज की कामना को युग की वाणी मानते हैं। इसके लिए वे मार्क्स के विचारों का अभिनंदन करते हैं–

साक्षी है इतिहास, आज होने को पुनः युगांतर,
श्रमिकों का अब शासन होगा उत्पादन यंत्रों पर।
धन्य मार्क्स ! चिर तमच्छन्न पृथ्वी के उदय शिखर पर
तुम त्रिनेत्र के ज्ञान चक्षु-से प्रकट हुए प्रलयंकर।

कविता में सत्यं, शिवं, सुंदरं समाज की कामना करते हुए पंत असुंदर को सुंदर और अपूर्ण को पूर्णता के रूप में देखना चाहते हैं। संग्रह की बापू, युगवाणी, मानव युग उपकरण, नव संस्कृति, मध्यवर्ग और नर की छाया आदि कविताओं में उनकी मानवीय पक्षधरता को देखा जा सकता है।

भारतीय इतिहास में नारी और मजदूर वर्ग की स्थिति लगभग समान रही है। जिन्हें सदियों से दबाकर रखा गया है। रीति-कालीन भोग्यानारी को गुप्त, हरिऔध, प्रसाद और निराला जैसे कवियों ने उदात्त रूप प्रदान करते हुए समाज की मुख्यधारा से जोड़ा। पंत नारी को माता, सखी और प्रिया का दर्जा देकर नर के वर्चस्व से मुक्त करना चाहते हैं–

मुक्त करो नारी को, मानव ! चिर बंदिनि नारी को,
युग-युग की बर्बर कारा से, जननि सखी, प्यारी को।

'युगवाणी' में युग और मानव के परस्पर संबंधों को पंत ने गहरी संवदेना के साथ व्यक्त किया है।

कालाकाँकर में रहते हुए कवि ने गाँव की अभाव भरी जिंदगी और पीड़ा को अच्छी तरह जाना और समझा। यही कारण है कि 'ग्राम्या' की अधिकांश रचनाओं में माटी की महक विद्यमान है। ग्राम कवि, ग्राम, ग्राम दृष्टि, ग्रामचित्र, ग्रामयुवती, ग्रामनारी, गाँव के लड़के, वह बुड्ढा, धोबियों का नृत्य, ग्रामबधू, ग्रामश्री कहारों का रुद्र नृत्य और ग्रामदेवता आदि कविताओं के माध्यम से कवि ने ग्रामीण जीवन की संस्कृति के विभिन्न पहलुओं को रेखांकित किया है। जिनमें उनकी लोकजीवन के प्रति आस्थावान संसक्ति और गहन मानवीय संवेदना की झलक मिलती है। 'ग्रामचित्र' कविता का यह अंश दृष्टव्य है–

यह तो मानव लोक नहीं रे, यह है नरक अपरिचित,
यह भारत की ग्राम-सभ्यता, संस्कृति से निर्वासित,
झाड़ फूंस के विवर–यही क्या जीवन शिल्पी के घर,
कीड़ों-से रेंगते कौन ये ? बुद्धि प्राण नारी नर ?

पंत ने भारतमाता को ग्रामवासिनी माना है, क्योंकि उसकी आत्मा गाँवों में बसती है। भारत की जिस प्रतिमा को हमारे कवि ने गढ़ा है। उसमें दिनकर, माखनलाल चतुर्वेदी, नवीन, गिरिजाकुमार माथुर, केदारनाथ अग्रवाल, केदारनाथ सिंह आदि के नाम प्रमुख हैं। जिन्होंने भारत की विभिन्न रूपों में वंदना की है और उसके महत्व को भी रेखांकित किया है। भारत की सामाजिक दुर्दशा देखकर कविवर पंत द्रवित हो उठते हैं–

भारतमाता ग्रामवासिनी ! तीस कोटि संतान नग्न तन
अर्ध क्षुधित, शोषित, निरस्त्र जन, मूढ़ असभ्य, अशिक्षित, निर्धन
नतमस्तक तरु तल निवासिनी !

निराला ने भिक्षुक कविता में जिस मानवीय पीड़ा को व्यक्त किया है, उसकी मुखर अभिव्यक्ति पंत की 'बुड्ढा कविता' में हुई है।

बैठी छाती की हड्डी अब, झुकी रीढ़ कमठा सी टेढ़ी,
पिचका पेट, गढ़े कंधों पर, फटी बिवाई से है एड़ी !
बैठ, टेक धरती पर माथा, वह सलाम करता है झुककर,
उस धरती से पाँव उठा लेने को, जी करता है क्षण भर।।

'ग्राम्या' के बाद की रचनाओं पर आध्यात्मिकता का प्रभाव है। कभी-कभी संदेह होता है कि क्या इसे ग्राम्या का कवि लिख रहा है। डॉ. नगेंद्र का मत है कि "मार्क्सवाद का भौतिक संघर्ष, निरीश्वरवाद, पंत जैसे कोमल-प्राण व्यक्ति का परितोष नहीं कर सकते। नारी के लिए आस्तिकता अनिवार्य हो जाती है आत्मा और ईश्वर में ही अंत में उसे जीवन और जगत का समाधान मिलता है।" पंत का यह नया आध्यात्मिक चरण उन्हीं के शब्दों में 'नवीन चेतना काव्य' अथवा नवमानवतावाद का साक्षात्कार है।

पंत जी अनुभूति और अभिव्यक्ति के धरातल पर सजग रहे हैं। उनकी रचनाओं में राग, बुद्धि और कल्पना का अद्भुत समन्वय हुआ है। सूर्य प्रसाद दीक्षित का मानना है कि "पंत प्रकृति को प्रेम, सौंदर्य, रहस्य, आनंद, अध्यात्म, एकांतप्रियता और स्वच्छंदता का सेतु माना है। पंत जी ने इसे तो 'देवि माँ सहचरिप्राण' अर्थात् अपना जीवन सर्वस्व स्वीकार किया है। निष्कर्ष यह है कि यह प्रकृति छायावादी काव्य-सौंदर्य का मूलाधार है।"

पंत के प्रकृति-चित्रण में भी उनकी मानवीय दृष्टि स्पष्ट रूप से झलकती है। विशुद्ध प्रकृति-चित्रण की भाषा संस्कृतिनिष्ठ बोधगम्य हैं 'युगांत', 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' की रचनाओं में ग्रामीण जीवन की भाषा की खुशबू विद्यमान है। विभिन्न अलंकारों, बिंबों और प्रतीकों का सुंदर प्रयोग हुआ है। पंत ने न केवल सप्राण और नवीन बिंबों और प्रतीकों का विधान किया है अपितु अभिव्यक्ति की आवश्यकतानुसार भाषा का नूतन निर्माण और गठन भी किया।

पंत जी छायावादी काव्यधारा के एक प्रमुख स्तंभ हैं। उनकी काव्ययात्रा का आरंभ प्रकृति के लोकोत्तर शोभा-संसार और सुकोमल स्वरूप के चित्रण से हुआ। किंतु कोई भी समर्थ कवि ठहराव की स्थिति में नहीं आता। देशकाल परिस्थिति से निर्मित परिवेश के साथ निरंतर होने वाले घात-प्रतिघात के परिणामस्वरूप उसका अनुभव-विश्व विकसित होता जाता है। मूलत: संवेदनशील होने के कारण वह अपने चतुर्दिक व्याप्त वातावरण से निर्लिप्त नहीं रह सकता, साथ ही उसका मानवीय सरोकार भी निरंतर सजग रहता है इन्हीं आधारों पर सृजनशील शक्ति का विकास होता है। पंत जी का रचनाकार इस दृष्टि से अविरत विकसित होता रहा है प्रकृति-चित्रण से आंरभ करके मानवीय मूल्यों की पड़ताल करते हुए अरविंद दर्शन तक की सुदीर्घयात्रा में पंत जी के काव्य का केंद्र किसी-न-किसी रूप में मनुष्य और मानवीय मूल्य ही रहे हैं। उन्होंने मूल्यनिष्ठ समतामूलक समाज में अनंत मानवीय संभावनाओं को तलाशने का कार्य किया है। संक्षेप में पंत की संपूर्ण काव्यचेतना उनकी मानवीय दृष्टि पर केंद्रित है।

2523 HRD/2001—4